बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 255

सतर्क करती चेतावनी

एसऐंडपी ग्लोबल रेटिंग्स ने अपने ताजा नोट में चेतावनी दी है कि लगातार धीमी आर्थिक वृद्धि भारत की सॉवरिन रेटिंग पर असर डाल सकती है। गुरुवार देर शाम जारी एक वक्तव्य में एसऐंडपी ने कहा कि यदि भारतीय अर्थव्यवस्था में सुधार नहीं नजर आता है तो वह भारत की सॉवरिन रेटिंग घटा सकती है। गत माह एक और वैश्विक रेटिंग एजेंसी मूडीज ने भारत की क्रेडिट रेटिंग को स्थिर से घटाकर ऋणात्मक कर दिया था। इसके लिए आर्थिक मंदी, आवासीय क्षेत्र में वित्तीय तनाव और वित्तीय क्षेत्र में नकदी की कमी को वजह बताया गया था।

भारतीय अर्थव्यवस्था कठिन दौर से गुजर रही है और आर्थिक प्रबंधन के जटिल होने से रेटिंग में गिरावट की आशंकाओं में इजाफा ही होगा। चालू वित्त वर्ष की दूसरी तिमाही में देश की आर्थिक वृद्धि दर छह वर्ष के निचले स्तर तक गिरकर 4.5 फीसदी रह गई। उच्च तीव्रता वाले संकेतक भी आने वाली तिमाहियों में किसी सुधार की ओर इशारा नहीं कर रहे हैं। वृद्धि में भारी गिरावट के लिए अस्थायी और ढांचागत दोनों तरह के कारण उत्तरदायी हैं। हालांकि एसऐंडपी को आर्थिक वृद्धि दर में सुधार की अपेक्षा है लेकिन उसका यह कहना भी सही है कि सतत उच्च वृद्धि की वापसी काफी हद तक ढांचागत सुधारों पर निर्भर करेगी। अन्य कारकों के अलावा बैंकिंग और गैर बैंकिंग वित्तीय क्षेत्र में तनाव भी अर्थव्यवस्था में ऋण के प्रवाह को बाधित कर रहा है। इसका असर धीमी वृद्धि के रूप में देखने को मिल रहा है। इसने भारतीय रिजर्व बैंक की नीतिगत दरों के पारेषण को भी प्रभावित किया है। जबकि व्यवस्था में पर्याप्त नकदी उपलब्ध है।

इसके अलावा एसऐंडपी का यह कहना एकदम उचित है कि वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) के जटिल क्रियान्वयन ने भी अर्थव्यवस्था में कुछ विसंगतियां पैदा की हैं। जीएसटी तंत्र की दिक्कतों को दूर करने पर जरूरत से ज्यादा जोर नहीं दिया जा सकता। जीएसटी परिषद को व्यापक समीक्षा करनी चाहिए और खामियों को दूर किया जाना चाहिए।

जीएसटी के कमजोर प्रदर्शन ने केंद्र और राज्य सरकारों की वित्तीय स्थिति को कमजोर किया है। दरअसल देश की राजकोषीय स्थिति एक और खतरे का संकेत है। एसऐंडपी का मानना है कि देश का सरकारी घाटा इस वर्ष में बढ़कर जीडीपी के 7.4 फीसदी तक हो जाएगा। वृहद आर्थिक परिदृश्य सुधरने पर अगले वित्त वर्ष में संयुक्त घाटे के 7.1 फीसदी रह जाने की आशा है। बहरहाल, राजकोषीय घाटे और संचयी ऋण में वृद्धि भी सॉवरिन रेटिंग पर दबाव डाल सकती है। ऐसे में आर्थिक वृद्धि को गति देने के लिए अहम राजकोषीय विस्तार का विकल्प अब व्यवहार्य नहीं रह गया है।

सरकार को वृद्धि दर बहाल करने के तरीके तलाश करने होंगे। इसके साथ ही उसे राजकोषीय संतुलन कायम करने को लेकर भी प्रतिबद्ध रहना होगा। सॉवरिन रेटिंग पर पड़ रहे दबाव के अलावा उच्च घाटा और उधारी भी वित्तीय तंत्र में विसंगति उत्पन्न कर सकती है। इसका असर मध्यम अवधि में वृद्धि पर पड़ेगा। ऐसे में पूरा ध्यान बाजार की गतिविधियों पर प्रतिबंध कम करने पर होना चाहिए। इसमें कारक बाजार मसलन श्रम और भूमि बाजार भी शामिल हैं। ऐसा करके ही वृद्धि को गति दी जा सकती है। सरकार को वैश्विक व्यापार को लेकर अपने रुख पर भी नये सिरे से विचार करना चाहिए। बीते कई वर्षों से निर्यात में ठहराव है। यह भी उच्च वृद्धि दर की वापसी को बाधित करने वाला है। आर्थिक वृद्धि में तेज गिरावट स्पष्ट बताती है कि देश को कई स्तरों पर नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता है। नीति निर्माता अगर वैश्विक रेटिंग एजेंसियों के विचार की अनदेखी न करें तो बेहतर होगा।

अजय मोहंती

अर्थव्यवस्था की स्थिति और सरकार का रुख

ढांचागत सुधारों का संबंध निजीकरण, भूमि और श्रम से उतना नहीं है जितना कि यह निजी उपक्रमों के दायरे में विस्तार और उन्हें अधिक प्रतिस्पर्धी तथा उत्पादक बनाने से है। बता रहे हैं देवाशिष बसु

देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की वृद्धि दर इस वित्त वर्ष की दूसरी तिमाही में गिरकर 4.5 फीसदी रह गई। पूरे वर्ष के लिए यह अधिक से अधिक 5 फीसदी रहेगी। आम आदमी को यह समझ नहीं आ रहा कि पांच वर्ष से अधिक समय से देश पर विकास पुरुष का शासन होने के बावजूद वृद्धि दर 7.5 फीसदी से गिरकर 4.5 फीसदी कैसे रह गई। मायूसी की स्थिति है लेकिन इस अप्रत्याशित स्थिति को लेकर कोई आधिकारिक आर्थिक दलील सुनने को नहीं मिली जो हालात को स्पष्ट कर सके। अब जरूर सरकार की ओर से आर्थिक दलील सुनने को मिल रही हैं। प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के चेयरमैन विवेक देवराय ने पत्रिका 'ओपन' में एक आलेख लिखकर मंदी के बारे में स्पष्टीकरण दिया है। उनकी मुख्य दलीलें इस प्रकार हैं।

1. हम अभी भी वृद्धि हासिल कर रहे हैं, प्रसन्न रहिए: भारत दुनिया की सबसे तेज विकसित होती अर्थव्यवस्थाओं में शामिल है। मेरा (उनका नहीं) मानना है कि लोग बिना मंदी को महसूस किए मंदी की बात करते हैं। परिभाषा की बात करें तो लगातार दो तिमाहियों में जीडीपी में कमी आने पर ऐसा कहा जा सकता है। यह सच है लेकिन देवराय अनुमान बनाम हकीकत की बात पर चूक जाते हैं। लोगों ने मतदान बेहतरी के लिए दिया था या बदतरी के लिए? सन 2014 में क्या वाकई उन्होंने उम्मीद की होगी कि मोदी सरकार के पांच साल के कार्यकाल के बाद 5 फीसदी की वृद्धि दर मिलेगी।

2. मुद्रास्फीति कम है, प्रसन्न रहिए: चूंकि जीडीपी के आंकड़ों का मुद्रास्फीति के साथ समायोजन किया जाता है इसलिए यदि मुद्रास्फीति 3 फीसदी है तो वर्ष की नॉमिनल वृद्धि 8 फीसदी होगी। वर्ष 2014 के बाद से सरकार की प्रमुख उपलब्धियों की बात करें तो मुद्रास्फीति में कमी इनमें प्रमुख है। लेकिन इसकी अधिक सराहना नहीं होती। वह कहते हैं कि मुद्रास्फीति गरीबों को अधिक प्रभावित करती है। वह याद दिलाते हैं कि यदि वास्तविक वृद्धि दर 5 फीसदी, मुद्रास्फीति 10 फीसदी और सांकेतिक वृद्धि दर 15 फीसदी होती तो हालत ज्यादा खराब होती।

यहां कई बातें हैं। कम मुद्रास्फीति कम समेकित मांग के कारण है। यह स्वतंत्र चर नहीं है क्योंकि मोदी सरकार के विभिन्न कदम वृद्धि और मुद्रास्फीति में इस गिरावट के लिए उत्तरदायी हैं। यह एक अनचाहा परिणाम है। इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि मुद्रास्फीति को कम करके गरीबों को राहत देना सरकार का नीतिगत लक्ष्य था। हकीकत में मोदी सरकार का सबसे बड़ा वादा किसानों की आय दोगुनी करने का था। चूंकि देश कोई बड़ा कृषि निर्यातक नहीं है इसलिए इससे भारी खाद्य मुद्रास्फीति उभरती।

3. कमजोर वैश्विक कारोबार का दोष है सरकार का नहीं: देवराय कहते हैं कि जीडीपी वृद्धि का कम से कम 3 फीसदी निर्यात से आता है। यदि निर्यात वृद्धि समाप्त हो जाएगी तो जीडीपी वृद्धि दर 6 फीसदी पर सिमट जाएगी। देवराय के मुताबिक निर्यात को तीन कारक प्रभावित करते हैं: वैश्विक मांग, वैश्विक आपूर्ति और विनिमय दर। इनमें से पहले के बारे में सरकार कुछ नहीं कर सकती और तीसरे में भी उसका मामूली दखल है। जहां तक आपूर्ति की बात है तो सरकार ने लॉजिस्टिक्स में सुधार के उपाय अपनाए हैं। यानी कुल मिलाकर विशुद्ध निर्यात सीमित बना रहेगा।

यदि यह सब जमीनी घटनाक्रम की तुलना में बहुत असंबद्ध और अकादमिक प्रतीत हो रहा है तो वाकई ऐसा है। सन 2010 में विश्व के वस्त्र निर्यात में चीन की हिस्सेदारी 36.6 फीसदी थी जो 2018 में घटकर 31.8 फीसदी रह गई क्योंकि श्रम की लागत बढ़ी और तमाम ढांचागत बदलाव देखने को मिले। इसका लाभ वियतनाम और बांग्लादेश को मिला जिनकी हिस्सेदारी क्रमश: 2.9 फीसदी से बढ़कर 6.2 फीसदी और 4.2 फीसदी से बढ़कर 6.4 फीसदी हो गई। जबकि भारत की हिस्सेदारी 3.3 फीसदी से गिरकर 3.2 फीसदी रह गई। ऐसा क्यों हुआ? क्योंकि भारत में कारोबार करने की छोटी मोटी लागत बहुत अधिक है। इसके लिए केंद्र और राज्य दोनों उत्तरदायी हैं। इसे ढांचागत सुधारों की मदद से हल किया जा सकता है लेकिन देवराय के अनुसार यह दलील बेतुकी है। अगले बिंदु पर गौर कीजिए।

4. ढांचागत बनाम चक्रीय की बहस बेमानी है: देवराय लिखते हैं कि संकट की प्रकृति के ढांचागत या चक्रीय होने को लेकर एक बहस चल रही है जो बेमानी है। यह बेमानी क्यों है? क्योंकि उनके मुताबिक सरकार असहाय है। वह मानते हैं कि ढांचागत बदलाव का अर्थ केवल निजीकरण और श्रम एवं भूमि कानूनों में बदलाव है। वह कहते हैं कि निजीकरण एक प्रक्रिया है जिसमें हड़बड़ी नहीं की जा सकती। विधायी बदलाव आवश्यक हैं जो संसद ही कर सकती है। जबकि सर्वाधिक मूल्यवान परिसंपत्ति यानी भूमि पर प्राय: राज्य सरकारों का आधिपत्य है। इसे केंद्र सरकार नहीं बेच सकती।

देवराय कहते हैं कि भूमि और श्रम आंशिक रूप से राज्य का मसला हैं और भूमि अधिग्रहण अधिनियम 2013 ने भूमि की लागत बढ़ाई और बुनियादी परियोजनाओं को पूरा करना कठिन कर दिया। उनके मुताबिक देश की वृद्धि दर में राज्यों के क्रियाकलाप का भी पूरा असर होता है और अकेले केंद्र सरकार ज्यादा कुछ नहीं कर सकती। सच तो यह है कि ढांचागत सुधारों का निजीकरण, भूमि या श्रम से ज्यादा लेनादेना नहीं होता। इसका संबंध निजी उद्यमों के दायरे के विस्तार तथा उनको प्रतिस्पर्धी और उत्पादक बनाने की इजाजत से अधिक है। इसकी शुरुआत कारोबार करने की छिटपुट लागत खत्म करने और राज्यों में भ्रष्टाचार के समापन से होनी चाहिए। वर्ष 2015 में एक आलेख में मैंने पूछा था कि आखिर भाजपा के इकलौते वोट जुटाऊ नेता (जो राज्यों के चुनाव में भी पार्टी के लिए वोट जुटाते हैं) प्रधानमंत्री मोदी भाजपा के शासन वाले राज्यो के साथ तालमेल करके हमें क्यों नहीं दिखाते कि राज्य स्तर पर किन सुधारों को अंजाम दिया जा सकता है?

कुल मिलाकर देवराय के मुताबिक 5 फीसदी की वृद्धि दर में दिक्कत की कोई बात नहीं। यह 6 फीसदी तक हो सकती है और अभी जो 'साफ-सफाई' चल रही है वह अर्थव्यवस्था को अधिक औपचारिक और किफायती बनाएगी। परंतु ऐसा रातोरात नहीं होगा। देवराय की बातें इस बारे में बहुत उपयोगी हैं कि आप इस सरकार से मंदी को लेकर क्या कदम उठाने की उम्मीद कर सकते हैं? आखिर हम सभी यह बात जानना चाहते हैं। इसका सीधा उत्तर है: कुछ खास नहीं।

तीन ऐसे खतरनाक मिथक जिनसे बना रहा आशावाद

नीति नियम

मिहिर शर्मा

मंदी के इस दौर में मौजूदा सरकार जो कदम उठा रही है उन्हें देखकर लगता है कि वह वाकई अपने ही प्रोपगंडा पर यकीन करती है। कुछ लोगों की आशंका है कि असहज करने वाले आंकड़े छिपाने और निवेशकों तथा मतदाताओं के समक्ष गुलाबी तस्वीर पेश करने की उसकी प्रवृत्ति बताती है कि सरकार निजी तौर पर सोचती कुछ है और सार्वजनिक रूप से बताती कुछ और है। परंतु यह गलत हुआ तो? यदि सरकार वाकई अपनी इन बातों पर यकीन करती हो तो? इससे सरकार की आकलन और विश्लेषण क्षमताओं पर कुछ सवाल उठते हैं लेकिन यह उसे छल के आरोप से बरी करता है।

सन 2014 से ऐसे आशावादी लोगों की कमी नहीं रही जो अर्थव्यवस्था को लेकर कम नकारात्मक सोच रखने की मांग करते रहे हैं। अब जबकि फिलहाल के लिए ऐसी अधिकांश आवाजें खामोश हो चुकी हैं तो उन्हें संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए और पूछा जाना चाहिए कि किसी को ऐसे भ्रमित कैसे किया जा सकता है। दरअसल तीन मिथक हैं जिन्होंने हमें इस स्थिति तक पहुंचाया।

पहला मिथक: यह धारणा कि वर्ष 2012-13 का संकट समाप्त हो चुका है। नीतिगत पंगुता के उस दौर को याद कीजिए। उस वक्त ज्यादातर लोग मानते थे कि संप्रग सरकार पंगु थी और उसकी नीति निर्माण क्षमता और राजनीतिक पूंजी की कमी ने अर्थव्यवस्था को ठप कर दिया, निवेश में धीमापन आया और वृद्धि में गिरावट आई। ऐसे में जब 2014 में बहुमत की सरकार आई तो लगा कि संकट हल हो जाएगा। परंतु यह सोचना गलत था। सन 2012-13 का संकट किसी एक सरकार की नीतिगत पंगुता का संकट नहीं था। यह सरकारी मशीनरी की नाकामी का संकट था। नियमन इतने मजबूत नहीं थे कि वृद्धि और पारदर्शिता दोनों हासिल हो सकें, विवाद निस्तारण व्यवस्था कमजोर थी जिससे पूंजी दांव पर लग गई थी। निजी क्षेत्र के प्रतिफल को प्रभावित करने वाले सरकारी कदमों के कारण अतिरिक्त सतर्कता की स्थिति बन गई थी। इस दिशा में ऋणशोधन अक्षमता एवं दिवालिया संहिता जैसे कुछ कदम उठाए गए। परंतु संकट की बुनियादी वजहों का निराकरण नहीं किया जा सका। हम उसी संकट का परिणाम झेल रहे हैं।

दूसरा मिथक: यह धारणा कि भारी-भरकम सरकारी निवेश वृद्धि के लिए पर्याप्त है। यह विचार भी तमाम गलत धारणाओं से उपजा इनमें से एक थी चीन के मॉडल को गलत ढंग से समझना। सच यह है कि बेहतर बुनियादी ढांचा तभी मायने रखता है जब निजी क्षेत्र को उसका उपयोग फायदेमंद लगे। ऐसी बुनियादी परियोजनाओं की सार्वजनिक फंडिंग तभी काम आती है जब निजी क्षेत्र नई परियोजनाओं में निवेश कर अतिरिक्त बुनियादी ढांचे तैयार करता है। चीन की अर्थव्यवस्था राज्य संचालित है। वहां निजी निवेश को आसानी से ऐसा करने को कहा जा सकता है। भारत में इसकी संभावना कम है। खासकर तब जब निजी क्षेत्र के पास फंड की कमी हो। निजी क्षेत्र की दिक्कतों मसलन अतिरिक्त क्षमता, कर्ज के बोझ, कर आंतक और कड़े नियमन को दूर किए बिना बुनियादी क्षेत्र में निवेश की अपेक्षा बेमानी है। ऐसे में राज्य का निवेश अपेक्षित नहीं था। यदि कोई ट्रक खरीदना नहीं चाहता या परिवहन के लिए वस्तुएं ही नहीं हैं तो राजमार्ग निर्माण का कोई मतलब नहीं है।

तीसरा मिथक: अतृप्त भारतीय घरेलू मांग का विचार। हमने कई ऐसे वर्ष देखे हैं जब मांग वृद्धि का सहयोग करती दिखी। परंतु यह एक लोकलुभावन नीति का उत्पाद थी जिसने अस्थायी रूप से आय वृद्धि, घरेलू ऋण विस्तार का सहयोग किया। वहीं खाद्य और ईंधन मुद्रास्फीति में ढांचागत कमी ने आपूर्ति क्षेत्र पर सकारात्मक असर डाला। इनमें से कोई कारक स्थायी नहीं है। ऐसे में अनकही अपेक्षा यह थी कि मांग में तब तक तेजी बनी रहेगी जब तक कि निजी क्षेत्र में क्षमता का पूरा इस्तेमाल सुनिश्चित नहीं हो जाता और निवेश को नए सिरे से गति नहीं मिल जाती। परंतु ऐसा लगता है कि यदि ऐसा संभव था तब भी मांग उस सीमा तक नहीं पहुंच सकी। निजी क्षेत्र ऋण की कमी से जूझ रहा है लेकिन उसे उन निवेश परियोजनाओं की धन के लिए पैसे की जरूरत भी महसूस नहीं हो रही है जो अचानक आकर्षक प्रतीत होने लगी हैं। दिक्कत यह है कि देश की उपभोक्ता आधारित अर्थव्यवस्था के आकार और उसके घटक को लेकर जरूरत से ज्यादा विश्वास किया जा रहा था। ऐसी अर्थव्यवस्था जो विकास की हमारे जैसी अवस्था में हो वह निवेश और वृद्धि के लिए केवल घरेलू मांग पर निर्भर नहीं रह सकती। चीन ने वृद्धि का जो चमत्कार किया है या उससे पहले पूर्वी एशिया के देशों में जो हुआ उसकी वास्तविक व्याख्या यह है कि घरेलू आपूर्ति प्रतिक्रिया घरेलू के बजाय वैश्विक मांग से संबद्ध रही। दूसरे शब्दों में भारत को कारोबारी देश बनना होगा। शायद सरकार का यह सोचना सही है कि घरेलू उद्योग को व्यापारिक प्रभावों से बचाया जाए लेकिन यदि ऐसा है तो पहले दिन से सरकार का प्रयास यह होना चाहिए था कि भारतीय विकास को विश्व बाजार तक पहुंच बनानी चाहिए, बस चुनिंदा घरेलू उद्योगों को अस्थायी संरक्षण देना चाहिए। खेद की बात है कि सरकार की दृष्टि केवल घरेलू मांग और उद्योग पर केंद्रित है। विश्व बाजार उसकी नजर से ओझल है। यानी सतत मांग की कमी के कारण निजी क्षेत्र में अतिरिक्त क्षमता की समस्या बनी रहेगी।

परंतु यदि मध्यम अवधि में ऐसा आशावादी रुख रखना है तो यह इस बात पर निर्भर करेगा कि क्या नकारात्मकता के इन स्रोतों को समाप्त किया जा सकता है? प्रशासनिक और कारक बाजार के ढांचागत सुधार की मदद से ही 2012-13 के संकट से उबरा जा सकता है। निजी क्षेत्र के सहयोग के साथ सरकारी व्यय की गुणवत्ता सुधारनी होगी, ऐसा करके ही सरकार के पूंजीगत व्यय की मदद से उत्पादकता और वृद्धि में सुधार किया जा सकता है और अतिरिक्त क्षमता का इस्तेमाल और निवेश परियोजनाओं की कमी दूर की जा सकती है। यदि ऐसा नहीं हुआ तो नकारात्मकता के बरकरार रहने की पर्याप्त वजह है।

कानाफूसी

महिला सुरक्षा की कवायद

देश भर में महिला सुरक्षा का मुद्दा इस समय चर्चा में है। ऐसे में उत्तर प्रदेश में महिलाओं पर अपराध में हो रही बढ़ोतरी को देखते हुए प्रदेश के मुख्यमंत्री आदित्यनाथ के नेतृत्व वाली सरकार ने ऐंटी-रोमियो स्क्वाड को नये सिरे से प्रभावी बनाया है। इस स्क्वाड का गठन मार्च 2017 में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के प्रदेश में सरकार बनाने के तत्काल बाद किया गया था। इस स्क्वाड की आलोचना भी हुई कि यह सार्वजनिक स्थलों पर बैठे युगलों को परेशान करता है। धीरे-धीरे स्क्वाड का काम शिथिल पड़ गया। अब जबकि हाल के दिनों में महिला सुरक्षा का मुद्दा नये सिरे से जोर पकड़ रहा है तो उत्तर प्रदेश पुलिस ऐंटी-रोमियो स्क्वाड तथा यातायात विभाग के पुलिसकर्मियों के लिए 25,000 ऐसे कैमरे खरीद रहा है जो शरीर पर लगाए जा सकेंगे। जिलों की पुलिस टीमों को भी महिला सुरक्षा से जुड़ी घटनाओं को लेकर संवेदनशील बनाया जा रहा है। इतना ही नहीं इन मामलों में पुलिस द्वारा अपराधियों के खिलाफ की जा रही कार्रवाई को सत्ताधारी भाजपा के पदाधिकारी ट्विटर पर अपलोड कर रहे हैं ताकि विपक्षी दलों के सवालों के जवाब दिए जा सकें।

अजय मोहंती

आपका पक्ष

धर्मनिरपेक्षता पर सवाल करता विधेयक

संसद में नागरिकता संशोधन विधेयक लाना जितना आसान था उससे कहीं अधिक इसे पारित कराना और लागू करना है। सत्तारूढ़ भाजपा अपार बहुमत से सदन में है पर यह विधेयक कहीं न कहीं हमारे धर्मनिरपेक्षता और संविधान के मूल ढांचे पर एक प्रश्नचिह्न खड़ा करता है। अगर विवेक से सोचा जाए तो कहीं न कहीं यह देश के दो धर्म के समुदाय के बीच दूरियां बढ़ाने का काम करेगी। इसे लागू कराना कहीं न कहीं हमारे राष्ट्र निर्माताओं की सोच, उद्देश्य और उनकी कल्पना के भारतवर्ष का गला घोंटने जैसा होगा। हम 1947 में काफी संघर्ष और बलिदानों के बाद एक स्वतंत्र देश बने और तुरंत हमारा विभाजन भी हो गया। हम धर्म की तलवार से दो भागों में बंट गए। अलग देश पाकिस्तान मांगने वाले जिन्ना ने मुसलमानों के लिए पाकिस्तान ले लिया और शेष भारत बचा रह गया। लेकिन हमारे राष्ट्र निर्माता चाहे महात्मा गांधी, सरदार पटेल, जवाहरलाल नेहरू हों, किसी ने भी भारत को हिंदू राष्ट्र नहीं कहा। बल्कि यहां पर हर धर्म के लोगों को रहने, अपना गुजर-बसर करने और धर्म का प्रचार-प्रसार करने की आजादी दी। ये बातें संविधान के मौलिक अधिकारों में भी निहित है। एक सवाल उठता है कि अगर हम अपने पड़ोसी देशों के अल्पसंख्यकों को आसरा देकर भारत के नागरिक बना सकते हैं तो फिर पाकिस्तान, अफगानिस्तान और बांग्लादेश ही क्यों, श्रीलंका के तमिल समुदाय के लोगों को क्यों नहीं? उनके साथ भी तो वहां भेदभाव होता है।

धीरज कुमार, दरभंगा

राज्य सभा में बुधवार को नागरिकता संशोधन विधेयक पारित हो गया *-पीटीआई*

डेटा संरक्षण कानून हो मजबूत

सरकार डेटा सुरक्षा विधेयक ला रही है जिससे किसी व्यक्ति के निजी जानकारी की सुरक्षा की जा सके। वर्तमान में साइबर धोखाधड़ी की कई घटनाएं सामने आ रही हैं। इस धोखाधड़ी में किसी व्यक्ति की निजी जानकारियों के आधार पर बैंक के खाते से पैसा निकाल लिया जाता है। हाल में ही सरकार ने संसद में बताया कि पिछले एक साल में ऑनलाइन बैंकिंग के जरिये डेबिट और क्रेडिट कार्ड या इंटरनेट बैंकिंग के धोखाधड़ी के मामले 34 हजार से बढ़कर 54 हजार हो गए हैं। इस धोखाधड़ी को रोकने के लिए सरकार जागरूकता अभियान चला रही है लेकिन लोग ठग के झांसे में आ ही जाते हैं। अगर सरकार डेटा सुरक्षा कानून बनाती है तो शायद इस प्रकार की धोखाधड़ी के मामले में कमी आ सकती है। किसी व्यक्ति की निजी जानकारी आज इंटरनेट पर आसानी से मिल जाती है। सोशल मीडिया में किसी व्यक्ति की पूरी जानकारी अर्थात नाम, पता, जन्म तिथि, शैक्षणिक आदि होती है। इसके अलावा व्यक्ति डेबिट या क्रेडिट कार्ड का इस्तेमाल कई जगहों पर करता है। आज छोटे से छोटे भुगतान के लिए ऑनलाइन या कार्ड से किया जाता है। ऐसे में उस व्यक्ति की बैंक खाते की जानकारी कोई चुरा सकता है। ऐसे ही किसी व्यक्ति की जानकारी चुराने के बाद उनके खाते से राशि निकाल ली जाती है। इसे रोकने के लिए लोगों में जागरूकता के साथ सरकार को विशेष साइबर कानून बनाने की जरूरत है जिससे भुगतान करने पर कोई जानकारी लीक न हो। अत: सरकार को इन पहलुओं पर विचार कर डेटा संरक्षण कानून को मजबूत बनाना चाहिए।

आरती कुमारी, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।